कहानी

उनकी टाँग

डॉ. लवलेश दत्त

सिंहासन बत्तीसी की कहानियाँ सुनीं थीं। टी. वी. पर धारावाहिक भी देखा और अनुमान भी लगाया कि राजा विक्रमादित्य अपने सिंहासन पर बैठे कैसे लगते होंगे? लेकिन मेरी यह कल्पना तब साकार हुई, जब विद्यालय से घर पहुँचा ही था कि जेब में पड़ा फोन कँपकँपा उठा, मैं तो समझा कि शायद दिल में कंपन हो रहा है, लेकिन अगले ही पल हाथ स्वयं ही जेब में पहुँच गया और मैंने फोन निकालकर देखा कि किसका फोन है? फोन श्रीमती जी का था इसलिए उसे काटने या अवाइड करने का तो प्रश्न ही नहीं था, तुरन्त आज्ञाकारी पति की होने का फर्ज़ निभाते हुए फोन अटेण्ड किया। हैलो कहने से पहले ही आकाशवाणी की तरह फोन से आवाज़ आई, "घर में हो तो तुरन्त बाहर आ जाओ"। मेरे 'क्या हुआ' पूछने से पहले ही फोन कट गया। बहरहाल मैं तुरन्त ही बाहर गया, पर मुझे ऐसा कुछ नहीं लगा जिससे चौंका जाए। इधर और उधर से रिक्शे, मोटरसाइकिल और पैदल लोगों के साथ लोग अपने दैनिक कार्यों में लगे हुए थे। आवारा कुत्ते सड़क किनारे छाँव में सुस्ता रहे थे और कुछ पिल्ले यहाँ-वहाँ चहलकदमी कर रहे थे।

मैंने सड़क के दोनों ओर देखा, कुछ नहीं है मन में बुदबुदाया कि तभी एक रिक्शा आता हुआ दिखाई दिया जिस पर श्रीमती जी सिंहासन बत्तीस पर बैठे विक्रमादित्य की तरह सवार थीं और उनके दोनों ओर उनकी दो सखियाँ ऐसे बैठी थीं, मानों बत्तीस में दो पुतलियाँ। दोनों के दोनों हाथ प्लास्टिक की कई थैलियों से भरे थे, जैसे सरकार को चुनौती दे रहीं हों कि कितना भी प्रतिबंध लगाओ, हम तो प्लाटिक की थैलियाँ प्रयोग करेंगे। सरकार का क्या है? पॉलीथीन पर प्रतिबंध का आदेश दे दिया। अब गृहमंत्रालय माने न माने तो बेचारी सरकार करे भी तो क्या? रिक्शा पास आते ही मेरे मुँह से अचानक निकल पड़ा, "यह सिंहासन बत्तीसी कहाँ से आ रहा है?" "बकवास मत करो" श्रीमती जी गरजीं, "देख नहीं रहे हो फ्रेक्चर हो गया है, ज़रा सहारा दो।" मैंने हाथ पकड़ लिया। दोनों पुतलियाँ, मेरा मतलब सखियाँ पहले ही उतर चुकीं थीं और मुझ बेसहारा को सहारा देते हुए देख रही थीं। वे चुप थीं लेकिन उनके चेहरों की मुस्कान कह रही थी कि जिसे खुद सहारे की ज़रूरत है वह क्या सहारा देगा? खैर मैंने डेढ़ हड्डी का होते हुए भी उन्हें वैसे ही सहारा दिया जैसे किसी पंगु को बैसाखी। वे मेरे सहारे घर की ओर चलीं। उन्हें सड़क से घर तक लाते-लाते मुझे पसीने छूट गये। सड़क पर आवाज़ में जो कड़कपन था, वह घर आते-आते कराह में बदल गया, "हाय...बहुत दर्द हो रहा है...उफ।" वे लगातार कराहने लगीं। उनकी दोनों सखियों ने फटाफट बिस्तर लगाया और उन्हें तुरन्त आराम करने की सलाह दी। वे बिस्तर पर लेट गयीं। मैंने पूरी बात जाननी चाही तो वे शान्त रहीं जबकि उनकी सखियों ने आँखों देखा हाल सुना डाला, "आज कालेज में कई बार ऊपर नीचे चढ़ी उतरी थी, कभी प्रिंसिपल के ऑफिस तो कभी लाइब्रेरी। बस उसी में पैर मुड़ गया और फ्रेक्चर हो गया। सीधे अस्पताल से आ रहे हैं। एक्सरे की रिपोर्ट शाम को मिलेगी तब वास्तविकता का पता चलेगा कि कैसा फ्रैक्चर है?" " ओह ! देखकर उतरना चाहिए।" मैंने दबे स्वर में कहा। "कोई जानबूझकर थोड़े ही पैर तोड़ा है। अचानक से पैर मुड़ गया और फ्रैक्चर हो गया।" श्रीमती जी गरजीं। इस बार कराहने के स्थान पर वाणी में ओज था। मैंने अपना ज्ञान बखानना शुरू किया, "शरीर भारी पड़ने पर अक्सर यह समस्या आ जाती है। वैसे फ्रैक्चर नहीं होगा बस हड्डी में बाल आ गया होगा... जस्ट

हेयरलाइन। हमारे स्कूल में भी एक अध्यापिका...।" "हाँ...हाँ...तुम्हें तो मेरे शरीर से ही प्राब्लम है। तुम्हें तो तब यकीन होगा जब पूरे शरीर में प्लास्टर चढ़ जाएगा। यह बताओ, मैं कहाँ से मोटी हूँ? अभी तुमने मोटी औरतें देखी नहीं हैं, क्यों अर्चना?" उन्होंने अपनी बात पर समर्थन लेने के लिए पास खड़ी सखी का नाम लिया और अर्चना ने उनकी बात को आगे बढ़ाया, "अरे नहीं भाई साहब ! ऐसी कोई भारी नहीं है यह। बहुत-बहुत मोटी औरतें पड़ी हैं, जिन्हें आजतक कुछ नहीं हुआ। सब समय की बात है।" "हाँ...यह भी है।" मैंने हामी भरना ही श्रेयस्कर समझा। "अब ऐसे ही बैठे रहोगे? जाओ कोल्डड्रिंक ले आओ। बहुत गर्मी हो रही है।" मुझे बिस्तर से आदेश मिला और दोनों सखियों को प्रश्न, "अर्चना तू कौन सी लेगी 'पेप्सी' या 'मिरिण्डा' या कुछ और?" मुझे तो 'मिरिण्डा' ही पसन्द है अर्चना ने अपनी पसन्द बताई। "और तू गरिमा?" प्रश्न इस प्रकार दूसरी सखी की तरफ़ गया जैसे किसी मुशायरे में शमा एक शायर से दूसरे शायर की तरफ़ धीरे-से बढ़ाई जाती है। "मुझे तो 'स्ट्रांग थम्सअप' चाहिए।" दूसरी सखी ने इतराते हुए कहा। मैं आज्ञा का पालन करने के लिए उठा ही था कि, "अरे तू भी तो अपने लिए कुछ मँगा ले" गरिमा ने श्रीमती जी से कहा। "नहीं मेरा मन नहीं है कुछ भी खाने-पीने का।" "अरे...ऐसे कैसे? इतनी गर्मी हो रही है कुछ तरावट मिलेगी।" अर्चना ने गरिमा का समर्थन किया। ठीक है मेरे लिए 'माज़ा' ले आना। मुझे आदेश मिला।

मैं बाहर से तीनों कोल्डड्रिंक्स लेकर आया क्योंकि घर में इतने फ्लेवर एकसाथ होना असंभव था। वैसे भी बच्चों के घर में यह सब चीज़ें रुकती कहाँ हैं? आज लाओ कल खत्म। खैर घर बाजार में होने का सबसे बड़ा लाभ यही है कि जो चाहे जब चाहे तुरन्त दो मिनट में ले आओ। मैंने तीनों बोतलें और तीन गिलास लाकर मेज़ पर रख दिए। जैसे किसी बार में बार बाला बोतल और गिलास लाकर ही नहीं रखती बल्कि पैग भी बनाती है, वैसे ही मैं भी बोतल खोलकर गिलास में कोल्डड्रिंक उड़ेलने ही वाला था कि मुझे एक आवाज़ ने रोक लिया, "रहने दीजिए भाई साहब! हम बोतल से ही पी लेंगीं" स्वर गरिमा का था। मैं ओ. के. कहकर जैसे ही वहाँ से खिसकने लगा, कि अर्चना बोली, "अरे भाई साहब आप अपने लिए कुछ नहीं लाए।" "नहीं मन..." मैं बोला ही था कि श्रीमती जी ने बोतल मुँह से हटाई और आकाशवाणी की तरह बोल उठीं, "ये इसी में पी लेंगे।" "नहीं-नहीं मेरा मन नहीं है," मैंने झेंपते हुए कहा। "अरे छोड़िए भाई साहब! थोड़ा पी ही लीजिए, वैसे भी जूठा खाने-पीने से प्यार बढ़ता है" कहते हुए अर्चना ने ठहाका लगाया, गरिमा ने उसका साथ दिया और श्रीमती जी मुस्कुराते हुए कराहने लगीं।

शाम पाँच बजे श्रीमती जी को लेकर मैं हास्पिटल गया। रिसेप्शन पर श्रीमती जी का नाम बताते हुए एक्सरे माँगा। रिपोर्ट से पता चला कि माइनर हेयरलाइन है। मैं खिल उठा अन्ततः मेरा अनुमान ठीक निकला। रिसेप्शन पर ही पूछताछ करने पर पता चला कि प्लास्टर अभी हो जाएगा। अन्दर जाकर कम्पाउण्डर से बात कर लें। मैं श्रीमती जी को लेकर अन्दर गया। कम्पाउण्डर ने एक्सरे देखकर बोला, "माइनर हेयरलाइन है। घबराने की कोई बात नहीं जल्दी ठीक हो जाएगा। फिर भी छह हफ्ते तो लगेंगे ही। आइए इधर बैठिए।" कम्पाउण्डर ने श्रीमती जी को पास ही रखे एक स्टूल पर बैठा दिया और पैर सुन्न करने के लिए एक इंजेक्शन का नाम लिखकर मुझे दिया, "यह ले आइए।" मैं इंजेक्शन लेकर आया ही था कि श्रीमती जी ने कम्पाउण्डर की ओर संकेत करते हुए मुझसे कहा, "सुनो, ये भइया क्या कह रहे हैं?" "हाँ बताइए" कहते हुए मैं उसकी ओर मुड़ा। "देखिये सर, दो प्रकार के प्लास्टर आते हैं। एक तो 'पी ओ पी' यानि की 'जनरल' और दूसरा प्लास्टिक का 'इम्पोर्टेड', आप जो करवाना चाहें।" "क्या अन्तर है दोनों में?" मैंने अपने पर्स पर ध्यानकेन्द्रित करके पूछा। "बहुत अन्तर है, पैसे का भी और क्वालिटी का भी। पीओपी वाले में साढ़े तीन सौ लगेंगे

और प्लास्टिक वाले में साढ़े सात सौ। पीओपी प्लास्टर भारी होता है, जबकि यह हल्का होता है और देखने में भी अच्छा लगता है। दो दिन में ही मरीज चल फिर सकता है। पीओपी में तो बस बिस्तर में ही पड़े रहो।" कम्पाउण्डर लगातार बोलता रहा। इससे पहले मैं कुछ कहता श्रीमती जी बोल उठीं, "ठीक है, प्लास्टिक वाला ही कर दो।" कम्पाउण्डर ने तुरन्त कागज पर कुछ लिखा और मुझे देते हुए बोला, "लीजिए, बाहर मेडिकल से ले आइए। एक सील्ड पैकेट में होगा।" मैं चुपचाप मेडिकल से वह प्लास्टर का पैकेट ले आया। तब तक कम्पाउण्डर पैर सुन्न करने वाला इंजेक्शन लगा चुका था। श्रीमती जी मुँह बना रही थीं। पैकेट कम्पाउण्डर के हाथ में देकर मैं पास पड़ी बैंच पर बैठ गया।

पैकेट खोला गया और उसमें से नीले रंग की प्लास्टिक की लम्बी पट्टी निकाल कर कम्पाउण्डर उनके पैर पर कसकर लपेटने लगा। पट्टी देखकर मैं खुद स्तब्ध था। मैंने तो वह पहली बार ही देखी। वर्ना सफेद प्लास्टर ऑफ पेरिस को ही काटन की पट्टियों में लपेट-लपेट कर रखते हुए देखा है। यह पट्टी का कमाल है। बस लपेटते जाओ और वह भी पूरे पैर में नहीं बस एड़ी वाले हिस्से में। दिखने में भी सुन्दर। जल्दी गंदा भी नहीं होगा। दस मिनट में ही प्लास्टर हो गया। डाक्टर आ चुके थे। अब हमें उनके चैम्बर में जाना था। मैंने सहारा देकर श्रीमती जी को ले जाना चाहा लेकिन वे बोलीं, "उधर से व्हील चेयर ले लो। मैं पैदल नहीं चल पाऊँगी।" मैने बिना सोचे ही आज्ञा का पालन किया। श्रीमती जी व्हील चेयर पर बैठते हुए मुझसे बोलीं, "चलो डॉक्टर साहब से मिल लें।" मैं भी सच्चे सेवक की तरह व्हील चेयर धकेलने लगा। साथ ही इधर-उधर भी देख रहा था कि कहीं मुझे कोई देख तो नहीं रहा। बहुत शर्म आ रही थी मुझे। जैसे तैसे डॉक्टर के चैम्बर में पहुँचे। डॉक्टर ने श्रीमती जी को देखा और पर्चे पर दवाइयाँ लिख दीं। श्रीमती जी ने प्रश्न किया, "कब तक लगा रहेगा डॉक्टर साहब?" मुस्कुराहट के साथ वे बोले, "पैंतालिस दिन तो लगेंगे ही। प्राब्लम क्या है? मजे से दो दिन बाद नार्मली चल सकती हैं। यह बहुत अच्छा प्लास्टर है। बस दवाइयाँ टाइम पर लेती रहिएगा। अभी पन्द्रह दिन की हैं। पन्द्रह दिन बाद एकबार दिखा दीजिएगा, फिर दवाइयाँ बदलनी पड़ेंगी।" पर्चा लेकर मैं बाहर आ गया। इस बार श्रीमती जी ने व्हील स्वयं घुमाने शुरू कर दिये। मुझे हँसी आ रही थी लेकिन अनजाने भय के कारण हँसा नहीं।

मेडिकल से दवाइयाँ लीं और घर चलने के लिए रिक्शेवाले को आवाज़ दी। एक रिक्शा तय कर लिया। श्रीमती जी को लेने अन्दर आया तो देखा चार-पाँच महिलाएँ उन्हें घेरे खड़ी हैं। साथ में एक अजीब-सा आदमी भी खड़ा है, जिसके पास से गुटखे की तीक्ष्ण गंध आ रही थी। मुझे देखते ही श्रीमती जी बोलीं, "देखो, पुष्पा मैडम ने कार भेज दी है। ये सब मेरे साथ ही कालेज में हैं, मुझे देखने आयीं हैं। चलो कार तक ले चलो।" अब तक एक वार्ड ब्याय व्हीलचेयर के पीछे आ चुका था। वह अजीब-सा आदमी उस कार का ड्राइवर था जिसने कार का गेट खोला और "बैठिये" दीदी कहा। वार्ड ब्याय ने उन्हें कार में चढ़ाया और व्हील चेयर वापस ले जाने से पहले मुझे बार-बार सलाम ठोंकने लगा। मुझे समझते देर न लगी। दस का नोट उसके हाथ पर रखा। बस.! कहते हुए उसने मुझे घृणित दृष्टि से देखा और व्हीलचेयर लेकर अस्पताल के अन्दर चला गया। मैं जब कार के अन्दर बैठने के लिए बढ़ा तो ड्राइवर ने मुझे रोककर कहा, "आप आगे बैठिये।" मैं ड्राइवर के बराबर आगे की सीट पर बैठ गया और तय किये रिक्शेवाले से नज़रें बचाने की कोशिश करने लगा, लेकिन उसने फिर भी टोक ही दिया, "क्या हुआ साहब?" "कुछ नहीं गाड़ी आ गयी", मैं झेंपता हुआ बोला और कार से बाहर झांकना बन्द कर दिया। कार चल दी। मैं चुपचाप सोचता रहा, 'अजीब बात है, ठीक समय पर कार आ गयी, चार पाँच सहयोगी अध्यापिकाएँ भी देखने आ गयीं, बड़ा तेज़ नेटवर्क है मैडम जी का।' इतने में ड्राइवर बोल उठा, "जब आपका फोन पहुँचा तो दीदी पूजा करने जा रही थीं। नहीं तो वह भी आतीं।" "अच्छा, उन्हें कल घर लेकर आना भइया," श्रीमती जी ने कहा। अब तक तो जो बात मेरे लिए रहस्य थी वह स्पष्ट हो चुकी थी। मैं समझ गया कि जब मैं दवाई लेने गया

हूँगा, तभी श्रीमती जी ने फोन करके सारी व्यवस्था कर ली होगी। मन-ही-मन मैंने कहा, 'कमाल है।'

रात के आठ बजने वाले थे। कार घर पहुँच गयी। हम दोनों को कार से उतार कर ड्राइवर ने मैडम जी को घर के दरवाज़े तक पहुँचाया और नमस्ते की कि तभी मैडम जी ने उसे याद दिलाया, 'कल दीदी को लेकर ज़रूर आना।' गर्दन को 'हाँ' में हिलाते हुए वह तेजी से चला गया। श्रीमती जी को मैंने अपनी बाहों का सहारा दिया और घर के अन्दर ले गया। अब उनकी आवाज़ में कराहने का स्वर था। घर आते ही पलंग पर पसर गयीं और कराहने का स्वर धीरे-धीरे चलता रहा जैसे किसी रेस्टोरेंट में हल्का-हल्का संगीत बजता रहता है। कराहने के साथ-साथ मैडम जी फोन में भी व्यस्त हो गयीं। कभी फोन आते तो कभी किये जाते, किन्तु बातें एक ही होतीं, "अरे क्या बताएँ? पैर में फ्रेक्चर हो गया। हाँ...अभी प्लास्टर चढ़वाकर आए हैं।...अच्छा ठीक है। कल आना...और हाँ...को भी बता देना कि मेरे पैर में फ्रेक्चर हो गया है।" मैं खाना खाकर उठा ही था कि आदेश मिला, "कल सुबह ही नाश्ते की कुछ बढ़िया-बढ़िया चीज़ें ले आना, कोल्डड्रिंक की बोलतें ले आना, ड्राईफ्रूट्स ले आना। कल कई लोग आ रहे हैं मुझे देखने।" मैं मन में बुदबुदाया, 'आ रहे हैं कि बुलाए जा रहे हैं?' आदेश देकर मैडम जी फिर से फोन पर लग गयीं, "अरे क्या बताएँ? आह...बहुत प्राब्लम हो गयी...आह...फ्रेक्चर हो गया...हाँ...आज सुबह...अरे तुम्हें क्या है...तुम्हें तो...अच्छा ठीक है। हाँ...आ जाना...जब चाहो...। कल तो कालेज से लोग आ रहे हैं...तुम परसों आ जाना...और हाँ...विनीता, नीलिमा, रंजना, मिसेज जौहरी, मिसेज अग्रवाल, अंशिमा, अनुश्री....को भी बता देना कि मेरे पैर में फ्रेक्चर हो गया है।" यह क्रम कब तक चलता रहा, पता नहीं। लेटने के थोड़ी ही देर बाद मुझे ये सारे शब्द मन्द सुनाई पड़ने लगे। मैं नींद की बाहों में था।

रोज़ की तरह उस दिन भी मैं सुबह जल्दी उठा। दैनिक कार्यों से निवृत्त हो स्कूल जाने की तैयारी करने लगा कि तभी सिंहनाद की तरह श्रीमती जी का स्वर गूँजा, "कहाँ जा रहे हो?" "स्कूल" मेमने की तरह मिमियाते हुए मेरा स्वर निकला। तुम्हें ज़रा भी सेन्स नहीं है। मेरा पैर टूट गया है, मैं चल फिर नहीं सकती और तुम हो कि अपनी ड्यूटी नहीं छोड़ सकते। दो-तीन दिन की छुट्टी ले लो। वैसे भी आज से कई लोग आएँगे मुझे देखने, उनकी देखभाल, चाय-नाश्ता वगैरह कौन करेगा? हो सकता है कि आज मुरादाबाद से दोनों दीदियाँ, उझानी वाले जीजा जी, झाँसी से भइया और भी कई रिश्तेदार आज सकते हैं। तुम्हें तो कम-से-कम घर पर ही रहना चाहिए।" मैं हतप्रभ रह गया कि इतनी जल्दी तो कोई न्यूज़ चैनल भी न्यूज़ अपडेट नहीं करता होगा। कमाल का न्यूज़ टेलिकास्ट है इनका तो। मैं निरीह प्राणी-सा चुपचाप बैठ गया और अपने विद्यालय में फोन करके तीन दिन की छुट्टी का निवेदन मिमियाते स्वर में करने लगा। फोन रखा ही था कि आवाज़ आई, "ज़रा हाथ पकड़ना पॉटी जाना है।" मैंने धीरे से कहा, "अरे चली जाओ, डॉक्टर ने तो कहा था कि कल से ही चलने फिरने लगेगी तो...." वे ऐसे दहाड़ीं कि मेरी बात अधूरी रह गयी, "पकड़ नहीं सकते हो। तुमसे तो कोई सहारा नहीं। इधर आओ चुपचाप।" न चाहते हुए भी मुझे सहारा देना पड़ा। उन्हें उनके गंतव्य तक पहुँचाया और धीरे से पूछा, "खड़ा रहूँ कि जाऊँ?" वे झुँझलाते हुए बोलीं, "बड़े अजीब आदमी हो, यहाँ खड़े-खड़े क्या करोगे? जाओ उधर।" मैंने तुरन्त आज्ञा का पालन किया।

इसी प्रकार आज्ञा का पालने करते हुए, मेहमानों-रिश्तेदारों आदि की सेवा करते हुए एक-दो-तीन दिन और फिर सप्ताह बीतने लगे। रविवार की एक सुबह इससे पहले कि हम बिस्तर पर पड़े-पड़े ऊँघते और अँगड़ाई का मज़ा लेते हुए उठते अचानक उनका फोन घनघना उठा और वे कराहती हुई (या कराहने का नाटक करती हुई) बोलीं, "ओ...हो...इतनी सुबह किसका फोन है...ज़रा फोन उठाना तो।" हमें आदेश मिल चुका था सो अब आँखों में नींद कहाँ रहने वाली थी, नींद भी हमें ठेंगा दिखा गयी। हमने तुरन्त फोन उन्हें थमा दिया। "हैलो...हाँ अरे

आप...ओ...हो...तो बेटी की याद आ ही गयी...(रोने का अभिनय) आपको तो पता ही नहीं यहाँ हम पर क्या बीत रही है?" और बातों का सिलसिला आरंभ हो गया। सारी बातों का सार यही था कि उनके पिताजी के मित्र को उनकी टाँग के टूटने की खबर लग गयी थी और वे आज ही उन्हें देखने आने वाले हैं। चूँकि पिताजी के मित्र किसी विश्वविद्यालय में कुलपति हैं लिहाजा अपने शिष्टमंडल के साथ उनके आने और भी न जाने क्या-क्या होने की अशंका से मन काँप उठा। मैं विचारमग्न (बहुत सीमा तक विचारशून्य भी) था कि आदेश हुआ, जल्दी-जल्दी सफाई कर डालो, वी. सी. साहब आ रहे हैं मुझे देखने।...और हाँ बढ़िया सा नाश्ता भी ले आना ज़्यादा-सा। शायद विद फैमिली आएँगे। मुझे आज्ञा देकर उन्होंने तुरन्त फोन किया, "हैलो संगीता! कहाँ है? देख पार्लर जाते समय ज़रा घर आ जाना।...और हाँ फेशियल का सामान साथ लेती आना। वह...मैं तुझे सब बता दूँगी, बस आधे घंटे में आ जा।"

आधा घंटा तो जाने कब का बीत गया। संगीता भी आ चुकी थी। श्रीमती जी ने सुन्दर बनने के ढेरों साधन अपना डाले क्योंकि कई दिनों से घर में पड़े रहने के कारण शायद सुन्दरता में कमी आ गयी थी। अतः फेशियल हुआ, आईब्रो बनी, नेलपालिश लगी, तलवे रगड़े गये, बाल कटे और न जाने क्या-क्या हुआ होगा क्योंकि कुछ-कुछ देर बाद कमरे का दरवाज़ा बन्द होता और हँसने की आवाज़ें आतीं। खैर आधे घंटे में आने वाली ने पूरे ढ़ाई घंटे, चार कप चाय और नाश्ता किया। उसके जाने के समय श्रीमती जी उसे देने के लिए पैसे गिन रही थीं और मैं उनकी टाँग के प्लास्टर कटने में बचे दिन।

डॉ. लवलेश दत्त , 165-ब, बुखारपुरा, पुराना शहर, बरेली-243005 (उ0प्र0), मोब. 9259972227 / 9412345679
lovelesh.dutt@gmail.com